दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

आप.वि.वा.सं. 1303/2008

निर्णय की तिथि: जुलाई 03, 2008

श्री चन्द्रमौली प्रसाद और अन्य ..... याचीगण

द्वारा: श्री के. सुनील, अधिवक्ता

बनाम

दिल्ली राज्य .....प्रत्यर्थी

द्वारा: श्री पवन बहल, अधिवक्ता

कोरम :

माननीय न्यायमूर्ति श्री सुदर्शन कुमार मिश्रा

1. क्या स्थानीय समाचार पत्रों के संवाददाताओं को निर्णय देखने की अनुमति दी जा सकती है?
2. रिपोर्टर को संदर्भित किया जाना है या नहीं? हाँ
3. क्या निर्णय डाइजेस्ट में प्रकाशित किया जाना चाहिए? हाँ

न्या. सुदर्शन कुमार मिश्रा: *(मौखिक)*

1. याचीगण श्री राजेंद्र कुमार, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, दिल्ली द्वारा एस.सी.-सं. 30/2006 में पारित दिनांक 17.4.2008 के आदेश से व्यथित हैं, जिसके

अंतर्गत दं.प्र.सं. की धारा 205 और 317 के अधीन व्यक्तिगत उपस्थिति से छूट के लिए याचीगण के आवेदन को तब तक के लिए खारिज कर दिया गया है जब तक कि न्यायालय आगामी चरण में उनकी उपस्थिति का निर्देश नहीं दे देता। यह आवेदन इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि केवल यह कारण कि याचिकाकर्ता, जो कि विचारण न्यायालय के समक्ष अभियुक्त है, एक अधिवक्ता, या एक कृषक, या एक व्यवसायी है, और उसे प्रत्येक सुनवाई के लिए लगभग 1100 किलोमीटर की दूरी तय करनी पड़ती है, अपने आप में विचारण में उपस्थिति के लिए स्थायी छूट का आधार नहीं हो सकता है। याचीगण के अधिवक्ता ने मेरा ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित किया है कि आवेदन में, जिसे विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था, याचीगण ने बताया है कि वे अपनी पहचान पर विवाद नहीं कर रहे हैं और इसलिए, इस तरह के किसी भी आधार पर विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में कोई बाधा नहीं आएगी। उसी समय, उन्होंने अपनी अनुपस्थिति में सम्पूर्ण प्रतिपरीक्षा और साक्ष्य दर्ज किए जाने पर भी सहमति व्यक्त की थी। उन्होंने यह भी परिवचन दिया कि जब भी न्यायालय को उनकी उपस्थिति की आवश्यकता होगी, वे स्वयं न्यायालय के समक्ष पेश हो जाएँगे।

2. यह सर्वविदित है कि आपराधिक कार्यवाहियों में अभियुक्त व्यक्तियों को विचारण के दौरान व्यक्तिगत रूप से या अपनी पसंद के अधिवक्ता के माध्यम से अपना बचाव करने के लिए उपस्थित होने का अधिकार होता है। इस अधिकार को इतिहास के दौरान कई शंकाओं से गुज़रना पड़ा है। प्रतिनिधित्व के इस अधिकार के इतिहास का पता लगाते हुए, संयुक्त राज्य अमेरिका के उच्चतम न्यायालय ने ***फरेटा बनाम कैल., 422 यू.एस. 806*** में यह टिप्पणी की है:

"16..... ब्रिटिश आपराधिक विधिशास्त्र के लंबे इतिहास में, केवल एक न्यायाधिकरण था जिसने कभी भी एक आपराधिक कार्यवाही में एक अनिच्छुक प्रतिवादी पर अधिवक्ता को मजबूर करने की प्रथा को अपनाया था। वह न्यायाधिकरण स्टार चेंबर था। वह जिज्ञासु संस्थान, जो 16वीं शताब्दी के अंत और 17 वीं शताब्दी की शुरुआत में फला-फूला, जो की मिश्रित कार्यकारी और न्यायिक चरित्र का था, और सामान्य विधि परंपराओं से विशिष्ट रूप से अलग था। उन कारणों से, और क्योंकि यह "राजनीतिक" अपराधों का विचारण करने में विशिष्ट है, स्टार चेंबर सदियों से बुनियादी व्यक्तिगत अधिकारों की अवहेलना का प्रतीक है। स्टार चैंबर ने न केवल प्रतिवादीगण को अधिवक्ता रखने की अनुमति दी, बल्कि उसे अनिवार्य भी बनाया है। अभियोग पर प्रतिवादी का उत्तर तब तक स्वीकार नहीं किया जाता था जब तक कि उस पर अधिवक्ता द्वारा हस्ताक्षर न कर दिए जाएँ। जब अधिवक्ता किसी भी कारण से उत्तर पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर देता, तो यह माना लिया जाता कि प्रतिवादी ने अपनी संस्वीकृति दे दी थी। स्टीफन ने इस प्रक्रिया पर टिप्पणी की है: "अभ्यास के नियमों का उपयोग इस तरह से करने में न्याय के लिए विशेष रूप से प्रतिकूल कुछ है कि एक कैदी को स्वयं का बचाव करने से रोक दिया जाए, विशेषकर तब जब इस प्रकार प्रयुक्त नियमावली का स्पष्ट उद्देश्य उसके बचाव की व्यवस्था करना हो। न्या.स्टीफन, ए हिस्ट्री ऑफ़ क्रिमिनल लॉ ऑफ़ इंग्लैंड 341-342 (1883)। स्टार चैंबर 1641 में लॉन्ग पार्लियामेंट के क्रांतिकारी आंदोलन से बंद हो गया था। तथा अनिवार्य अधिवक्ता की धारणा भी इसके साथ गायब हो गई।

17..... उस समय की सामान्य विधि के अनुसार, गंभीर अपराधों के अभियोजन में अधिवक्ता द्वारा प्रतिनिधित्व नहीं, बल्कि स्वयं प्रतिनिधित्व की प्रथा थी। एक समय में, प्रत्येक कक्षीकार को "न्यायालय के समक्ष स्वयं उपस्थित होना तथा अपने शब्दों में अपना मामला प्रस्तुत करना" आवश्यक था। जबकि सिविल मामलों और दुष्कर्म के मामलों में अधिवक्ता का अधिकार शुरू से ही स्थापित था, घोर अपराध या राजद्रोह के अभियोजनोम में अधिवक्ता की सहायता पर प्रतिबंध सदियों तक जारी रहा है। इस प्रकार, 16वीं और 17वीं शताब्दियों में अभियुक्त अपराधी या देशद्रोही बिना किसी अधिवक्ता की सहायता के उपस्थित होते थे, उनके पास न तो कोई अधिवक्ता होता था और न ही अन्य अधिकारों का लाभ का होता है – जैसे नोटिस, टकराव और अनिवार्य प्रक्रिया - जिसे हम अब वास्तविक रूप से निष्पक्ष प्रतिकूल कार्यवाही के साथ जोड़ते हैं। यह विचारण केवल "कैदी और न्यायालय के अधिवक्ता के बीच एक लंबी बहस थी।" यह बात अब भले ही इतनी कठोर लगती हो, परंतु कम से कम "कैदी को

> अपनी इच्छानुसार बयान देने की अनुमति थी..... ज़ाहिर है कि यह सार्वजनिक मौखिक विचारण कैदी को लिखित अभिसाक्ष्यों पर आधारित गुप्त जाँच की तुलना में कहीं अधिक अवसर प्रदान करती थी, जिसने आत्मसंयम पर विचारण का स्थान ले लिया था.....
>
> 22..... 1695 के राजद्रोह अधिनियम के साथ, अंग्रेज़ी आपराधिक प्रक्रिया में सुधार का एक लंबा और महत्वपूर्ण युग शुरू हुआ। 1695 के कानून ने अभियुक्त देशद्रोही को अभियोग की एक प्रति प्राप्त करने, अपने साक्षीगण को शपथ के अंतर्गत प्रमाणित करने और "विधि में पारंगत अधिवक्ता द्वारा पूर्ण बचाव करने" के अधिकार दिए। इसने न्यायालय द्वारा अधिवक्ता की नियुक्ति का भी प्रावधान किया, लेकिन केवल तभी जब अभियुक्त ऐसा चाहे। इस प्रकार, जैसे-जैसे नए अधिकार विकसित हुए, अभियुक्त ने अपने स्थापित अधिकार को बरकरार रखा कि वह "जो भी बयान देना चाहे दे।" अधिवक्ता के अधिकार को अधिवक्ता द्वारा प्रतिनिधित्व और स्व-प्रतिनिधित्व की पारंपरिक प्रथा के बीच एक विकल्प की गारंटी के रूप में देखा गया। गुंडागर्दी के मामलों में अधिवक्ता पर प्रतिबंध, जो न्यायालयों में काफ़ी हद तक खत्म हो गया था, अंततः 1836 में कानून द्वारा समाप्त कर दिया गया। हाल के वर्षों में, संसद ने गंभीर आपराधिक मामलों में न्यायालय द्वारा अधिवक्ता की नियुक्ति का प्रावधान किया है, लेकिन केवल अभियुक्त के अनुरोध पर। इंग्लैंड में सुधार की इस प्रक्रिया में किसी भी बिंदु पर अधिवक्ता को कभी भी प्रतिवादी पर मजबूर नहीं किया गया। सामान्य विधि का नियम, संक्षेप में आर बनाम वुडवर्ड, [1944] के.बी. 118, 119, [1944] 1 ऑल ई.आर. 159, 160 में कहा गया है, स्पष्ट रूप से हमेशा से यह रहा है कि "किसी भी व्यक्ति पर आपराधिक अपराध का आरोप लगाया गया है, उसकी इच्छा के विरुद्ध उस पर अधिवक्ता को थोपा नहीं जा सकता है।"

3. इसी आधार पर संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान का छठा संशोधन अभियुक्त को कार्यवाही में उपस्थित होने का अधिकार देता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के उच्चतम न्यायालय ने उपरोक्त मामले में आगे अभिनिर्धारित किया:

> "12..... अन्य परिस्थितियों में भी, न्यायालय ने संकेत दिया है कि अभियुक्त को आपराधिक विचारण में स्वयं का प्रतिनिधित्व करने का संवैधानिक रूप से संरक्षित अधिकार है। उदाहरण के लिए, स्नाइडर बनाम मैसाचुसेट्स, 291 यू.एस. 97 में, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि छठे संशोधन का टकराव खंड अभियुक्त को कार्यवाही के सभी चरणों में उपस्थित होने का अधिकार देता है, जहाँ उसकी अनुपस्थिति से मौलिक निष्पक्षता बाधित हो सकती है। "उपस्थिति"

> का यह अधिकार इस आधार पर आधारित था कि "यदि अभियुक्त को जूरी सदस्यों की परीक्षा या अधिवक्ता के सारांश में उपस्थित होने की अनुमति दी जाती है, तो बचाव आसान हो सकता है, क्योंकि यदि वह उपस्थित होता है, तो उसे सलाह या सुझाव देने या यहाँ तक कि अपने अधिवक्तागण को पूरी तरह से हटाकर स्वयं विचारण चलाने का अधिकार होगा....."

4. इसी संदर्भ में, न्यायिक समिति के माननीय न्यायाधीशगण ने ***बेसिल रैंजर लॉरेंस बनाम एम्परर, ए.आई.आर. (20) 1933 पी.सी. 218*** मामले में कहा कि:

> "9....यह हमारे आपराधिक विधि का एक आवश्यक सिद्धांत है कि एक अभ्यारोप्य अपराध का विचारण अभियुक्त की उपस्थिति में किया जाना चाहिए; और इस प्रयोजन के लिए विचारण का अर्थ है दंड सहित पूरी कार्यवाही। यहाँ यह कहने का अधिकार है कि दुष्कर्म के मामलों में विशेष परिस्थितियाँ हो सकती हैं जो अभियुक्त की अनुपस्थिति में विचारण की अनुमति देती हैं, लेकिन विचारणों में अपराध के लिए नियम तब तक अलंघनीय है जब तक कि संभवतः अभियुक्त का अन्यायपूर्ण आचरण स्वयं उसकी अनुपस्थिति में जारी रखना विधिपूर्ण नहीं बनाता है...."

5. इसी आधार पर, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 ने कार्यवाही के कुछ चरणों में अभियुक्त की उपस्थिति की स्वीकृति को मान्यता दी है। इसमें ऐसी उपस्थिति से छूट के मुद्दे पर भी विचार किया गया है। इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने ***सुल्तान सिंह जैन बनाम राज्य, ए.आई.आर. 1951 ऑल 864*** (एफ.बी.) में ***बेसिल मामले*** (पूर्वोक्त) में प्रिवी काउंसिल की टिप्पणियों का उल्लेख करते हुए अभिनिर्धारित किया है कि:

> "8. दंड प्रक्रिया संहिता में ऐसी कोई धारा नहीं है जो यह प्रावधान करती हो कि अभियुक्त को मामले की प्रत्येक सुनवाई में उपस्थित होना चाहिए, हालाँकि संहिता में कई धाराएँ हैं जो दर्शाती हैं कि कार्यवाही के कुछ चरणों में अभियुक्त की उपस्थिति के लिए विशेष रूप से प्रावधान किया गया है। हालाँकि, यह आपराधिक न्याय प्रशासन के महत्वपूर्ण सिद्धांतों में से एक है, जिसे सार्वभौमिक रूप से स्वीकार

> किया जाता है, कि आपराधिक विचारण में न्यायालय को अभियुक्त व्यक्ति के विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही नहीं करनी चाहिए।"

इसने आगे अभिनिर्धारित किया कि:

> "10. इसलिए, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि विचारण में अभियुक्त की उपस्थिति आवश्यक है, संहिता स्वयं दर्शाती है कि कुछ परिस्थितियों में अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति को छूट देने का विवेकाधिकार विचारण न्यायालय के पास है। धारा 205, दंड प्रक्रिया संहिता को छोड़कर इस आशय की कोई विशेष धारा नहीं है, लेकिन संहिता की कुछ अन्य धाराओं में यह निहित है। उदाहरण के लिए, धारा 353, दंड प्रक्रिया संहिता, अभियुक्त की उपस्थिति में साक्ष्य दर्ज करने का प्रावधान करती है और इस प्रकार है:
>
> " अन्यथा स्पष्ट रूप से प्रावधान किए जाने के सिवाय, अध्याय XVII, XXXI, XXI और XXII के अंतर्गत लिया गया समस्त साक्ष्य अभियुक्त की उपस्थिति में लिया जाएगा, अथवा जब उसकी व्यक्तिगत उपस्थिति समाप्त हो जाए, तो उसके प्लीडर की उपस्थिति में लिया जाएगा।"

ऊपर उल्लिखित धारा 353 वर्तमान संहिता की धारा 273 के समान है। दिलचस्प बात यह है कि वर्ष 1923 तक, ये धाराएँ ही संहिता में अभियुक्त व्यक्तियों की व्यक्तिगत उपस्थिति से छूट से संबंधित एकमात्र उपबंध थे। हालाँकि, 1923 में, एक संशोधन द्वारा संहिता में धारा 540क जोड़ी गई। यह धारा निम्नानुसार है;

> "540-क. कुछ मामलों में अभियुक्त की अनुपस्थिति में पूछताछ और विचारण किए जाने का उपबंध। – (1) इस संहिता के तहत पूछताछ और विचारण के किसी भी चरण में जहाँ दो या अधिक अभियुक्त न्यायालय के समक्ष हैं, यदि न्यायाधीश या दंडाधिकारी, लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से, संतुष्ट है कि उनमें से कोई एक या अधिक, यदि ऐसे अभियुक्त का प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा किया जाता है, तो उसे उपस्थित होने से छूट दे सकता है और उसकी अनुपस्थिति में ऐसी पूछताछ और विचारण आगे बढ़ा सकता है, और कार्यवाही के किसी भी बाद के चरण में, ऐसे अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति का निर्देश दे सकता है।

6. यह धारा उस स्थिति से निपटने के लिए जोड़ी गई थी, जब किसी मामले में दो या उससे अधिक अभियुक्त हों और उनमें से कुछ उपस्थित हों और अन्य अनुपस्थित हों। ऐसे मामले में, उपस्थित अभियुक्तगण को अनावश्यक कठिनाई का सामना करना पड़ता था, क्योंकि अन्य अभियुक्तगण की अनुपस्थिति के कारण विचारण लंबे और विलंबित हो जाते थे। 1955 में इस धारा में संशोधन करके इसका दायरा बढ़ाया गया। धारा निम्नानुसार है;

> "540-क. कुछ मामलों में अभियुक्त की अनुपस्थिति में पूछताछ और विचारण किए जाने का उपबंध। - (1) संहिता के अंतर्गत पूछताछ या विचारण के किसी भी चरण में, यदि न्यायाधीश या दंडाधिकारी को, लेखबद्ध किए जाने वाले कारणों से, यह समाधान हो जाता है कि न्यायालय के समक्ष अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति न्याय के हित में आवश्यक नहीं है, तो न्यायाधीश या दंडाधिकारी, यदि अभियुक्त का प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा किया जाता है, तो उसकी उपस्थिति से छूट दे सकता है और उसकी अनुपस्थिति में ऐसी पूछताछ या विचारण आगे बढ़ा सकता है और कार्यवाही के किसी भी बाद के चरण में ऐसे अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति का निर्देश दे सकता है।
>
> (2) यदि ऐसे किसी मामले में अभियुक्त का प्रतिनिधित्व किसी प्लीडर द्वारा नहीं किया जाता है, या यदि न्यायाधीश या दंडाधिकारी उसकी व्यक्तिगत उपस्थिति को आवश्यक समझता है, तो वह, यदि वह ठीक समझे, और उसके द्वारा अभिलिखित किए जाने वाले कारणों से, या तो ऐसी पूछताछ या विचारण को स्थगित कर सकता है, या आदेश दे सकता है कि ऐसे अभियुक्त के मामले को अलग से लिया जाए या उस पर अलग से विचारण किया जाए।"

7. इस संशोधन ने न्यायालय को अभियुक्त की उपस्थिति से छूट देने में सक्षम बनाया, जब उसका प्रतिनिधित्व प्लीडर द्वारा किया जा रहा हो, यदि न्याय के उद्देश्यों को सुरक्षित करने के लिए ऐसी उपस्थिति आवश्यक नहीं है। वर्तमान संहिता की धारा 317 भी इसी तरह से लिखी गई है। इसलिए यह निष्कर्ष निकलता है कि अभियुक्त व्यक्ति पर विचारण के प्रत्येक चरण में व्यक्तिगत रूप से

उपस्थित होने के लिए कोई बाध्यता नहीं होनी चाहिए। इस संबंध में, ***भास्कर इंडस्ट्रीज़ लिमिटेड बनाम भिवानी डेनिम एंड अपैरल्स लिमिटेड, (2001) 7 एस.सी.सी. 401*** में उच्चतम न्यायालय ने टिप्पणी की कि;

> "14.... आपराधिक न्यायालय की चिंता मुख्य रूप से आपराधिक न्याय का प्रशासन होना चाहिए। उस उद्देश्य के लिए, मामले में न्यायालय की कार्यवाही में प्रगति दर्ज होनी चाहिए। न्यायालय में अभियुक्त की उपस्थिति केवल उसे न्यायालय में देखने के लिए उसकी उपस्थिति दर्ज कराने के लिए नहीं है। इसका उद्देश्य न्यायालय को विचारण को आगे बढ़ाने में सक्षम बनाना है। यदि अभियुक्त की अनुपस्थिति में विचारण की प्रगति हासिल की जा सकती है, तो न्यायालय निश्चित रूप से उन कष्टों की मात्रा को ध्यान में रख सकता है जो किसी विशेष अभियुक्त व्यक्ति को उस विशेष मामले में न्यायालय में उपस्थित होने के लिए सहना पड़ सकता है।

8. इस संबंध में, याचीगण के अधिवक्ता ने ***भगवान दास एवं अन्य बनाम राज्य*** के मामले पर भी भरोसा किया है, जिसे ***ए.आई.आर. 1953 ऑल 630 (खंड 40 सी.एन. 315)*** के रूप में प्रतिवेदित किया गया है, जिसमें निम्नानुसार कहा गया है:-

> "4.... विधि के अनुसार अभियुक्त को विचारण के दौरान उपस्थित रहना चाहिए, ताकि उसे असुविधा न हो, बल्कि उसके हितों की रक्षा हो सके। ऐसे मामले में जहाँ अभियुक्त स्वयं न्यायालय में व्यक्तिगत उपस्थिति से छूट के लिए आवेदन करता है, तो न्यायालय को अनुरोध स्वीकार करना चाहिए, जब तक कि उसकी राय में यह आवश्यक न हो कि न्याय के हित में अभियुक्त को विचारण के दौरान उपस्थित रहना चाहिए, या जब तक कि विचारण के दौरान अभियुक्त की उपस्थिति के निर्देश देने के लिए कोई अन्य सुसंगत कारण न हों....."

9. याचीगण के अधिवक्ता ने ***ए. सुंदर पांडियन बनाम राज्य, 1987 (3) अपराध 655*** में मद्रास उच्च न्यायालय के एक निर्णय पर भी भरोसा किया है, जिसमें निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया था:-

> "3.... न्यायालयों को अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति से छूट देने में संकोच नहीं करना चाहिए, जब तक कि इससे अभियोजन पक्ष के हित को हानि न पहुँचे या संहिता के अंतर्गत अभियुक्त की उपस्थिति कानूनी रूप से आवश्यक न हो।"

10. एक अन्य निर्णय में, झारखंड उच्च न्यायालय ने ***2008 (1) बी.एल.जे. 58*** में प्रतिवेदित ***डॉ. प्रकाश अमृत मोदी एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य*** मामले में, अभिनिर्धारित किया:-

> "8.... परीक्षण मूल रूप से यह आश्वासन है कि अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति को समाप्त करने की अनुमति देने से न्यायालय की कार्यवाही में बाधा नहीं आएगी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह अपराध की गंभीरता पर भी निर्भर करेगा। दंडाधिकारी का दृष्टिकोण यह देखना होना चाहिए कि मामले के उद्देश्य के लिए व्यक्तिगत उपस्थिति बिल्कुल आवश्यक है या नहीं। दं.प्र.सं. की धारा 205 के अंतर्गत सुरक्षा के लिए प्रार्थना पर विचार करते समय, दंडाधिकारी को बहुत अधिक तकनीकी या कठोर दृष्टिकोण नहीं अपनाना चाहिए, क्योंकि केवल इसके लिए पूछे जाने पर विवेक का उदारतापूर्वक उपयोग नहीं किया जाना चाहिए। असाधारण विशेष परिस्थितियों और उस असुविधा को ध्यान में रखा जाना चाहिए जो अभियुक्त को दूरी या शारीरिक अक्षमता या किसी ऐसे अच्छे कारण से होने की संभावना है, यदि विचारण के समापन तक प्रत्येक तिथि पर उसकी व्यक्तिगत उपस्थिति पर ज़ोर दिया जाता है।

11. ***एस.वी. मजूमदार और अन्य बनाम गुजरात स्टेट्स फ़र्टिलाइज़र्स कंपनी लिमिटेड, (2005) 4 एस.सी.सी. 173 में***, उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की;

> "13... यह ध्यान में रखना होगा कि संहिता की धारा 205 के संदर्भ में किसी आवेदन पर विचार करते समय, न्यायालय को यह विचार करना होगा कि क्या अभियुक्त की व्यक्तिगत उपस्थिति की आवश्यकता से कोई उपयोगी उद्देश्य पूरा होगा या क्या उसकी अनुपस्थिति के कारण विचारण की प्रगति बाधित होने की संभावना है...."

12. ***भास्कर इंडस्ट्रीज़ लिमिटेड*** (पूर्वोक्त) के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि ऐसी परिस्थितियों में, अभियुक्त को छूट देने से पूर्व न्यायालय को कुछ

सावधानियाँ बरतनी चाहिए। उक्त निर्णय के पैराग्राफ 17 से निम्नलिखित उद्धरण प्रासंगिक है:

> "17..... ऐसी स्थिति में न्यायालय को एक सावधानी यह बरतनी चाहिए कि उक्त लाभ केवल उस अभियुक्त को ही दिया जाना चाहिए जो न्यायालय की संतुष्टि के लिए यह परिवचन देता है कि वह मामले में विशेष अभियुक्त के रूप में अपनी पहचान पर विवाद नहीं करेगा, तथा उसकी ओर से अधिवक्ता न्यायालय में उपस्थित रहेगा और उसकी अनुपस्थिति में साक्ष्य लेने में उसे कोई आपत्ति नहीं है…

13. अभियुक्त की उपस्थिति की आवश्यकता वाले उपबंध जो यह अनिवार्य करते हैं कि विचारण उसकी उपस्थिति में चलाया जाए, अभियुक्त के लाभ के लिए बनाए गए हैं और उनकी उत्पत्ति 16वीं शताब्दी के अंत और 17वीं शताब्दी की शुरुआत में इंग्लैंड में विधिक प्रणाली के सीमित दृष्टिकोण में हुई थी जो अभियुक्त के प्रति पक्षपातपूर्ण थी, जैसे कि स्टार चेंबर का न्यायालय। यदि अभियुक्त व्यक्ति स्वयं हर तिथि पर व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने के अधिकार का लाभ नहीं उठाना चाहता है; यदि वह न्यायालय और अपने अधिवक्ता पर पूरा भरोसा करता है, और उसे विश्वास है कि उसकी अनुपस्थिति में भी उसे न्याय मिलेगा, तो, परंतु उसकी अनुपस्थिति से उसे किसी भी तरह से कोई हानि न हो या विचारण की प्रगति में बाधा न आए, विचारण न्यायालय के लिए उसकी उपस्थिति पर ज़ोर देना आवश्यक नहीं है।

14. जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है, इस मामले में अभियुक्तगण ने अपनी पहचान के बारे में कोई मुद्दा न उठाने का परिवचन दिया है और यह भी कहा है कि जब भी उनकी व्यक्तिगत उपस्थिति की आवश्यकता होगी, वे स्वयं उपस्थित होंगे। उन्होंने यह भी स्पष्ट रूप से कहा है कि उनकी अनुपस्थिति में न्यायालय द्वारा साक्ष्य लिए जाने पर उन्हें कोई आपत्ति नहीं है।

15. मामले को देखते हुए, याचिका स्वीकार किए जाने योग्य है। याचीगण को एस.सी-30/2006 में राज्य बनाम श्री राजा राम यादव और अन्य में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने से छूट दी गई है, जो कि प्राथमिकी सं. 166/99 के अंतर्गत भा.दं.सं. धारा 308/34, पुलिस स्टेशन दिलशाद गार्डन से उत्पन्न हुई है, और उन्हें अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित होने की अनुमति है। हालाँकि, विचारण न्यायालय को जब भी आवश्यक हो, सभी या किसी एक याचीगण के व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने का निर्देश देने की छूट होगी।

16. याचिका का निपटान किया जाता है।

<u>आप.वि.आ. 4923/2008</u>

17. चूँकि याचिका का निपटान हो चुका है, इसलिए यह आवेदन मान्य नहीं है तथा इसका भी निपटान तदनुसार किया जाता है।

दस्ती।

न्या. सुदर्शन कुमार मिश्रा

03 जुलाई, 2008
आर.एस.

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*